योगामृत

—चिरन्तन महत्त्व की एक जनोपयोगी रचना

समीक्षक : डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया

धर्म-प्राण भारतीय संस्कृति में श्रेय और प्रेय में से श्रेय को ही अधिक सार-गर्भ माना गया है—त्यागप्रधान जैन-संस्कृति भी इसका अपवाद नहीं है। भौतिक सुख तुच्छ और हेय हैं, क्षणिक हैं, किन्तु इन्द्रियातीत पारलौकिक सुख चिरस्थायी, स्वाधीन और स्पृहणीय हैं। वस्तुतः स्वाधीन होने से आत्म-सुख ही सुख है और पराश्रित होने से इन्द्रियजन्य आनन्द दुःख-रूप है, छलावा है। केवल अध्यात्म-चिन्तन ही व्यक्ति को अहंकारमुक्त कर उसे वास्तविक ज्ञान प्रदान करता है और यह बताता है कि पर-पदार्थों—स्त्री, पुत्र, धन, शरीर आदि से आत्मिक सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती।

आत्मिक आनन्द की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक ग्रन्थों का पठन-मनन-चिन्तन और तदनुरूप आचरण आवश्यक है। इसके बिना सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। सांसारिक सुखों—जो वस्तुतः बन्धन का कारण होने से दुःख-रूप हैं—से मुक्ति और आत्मिक आनन्दोपलब्धि के लिए 'योगामृत' जैसे ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है, अतः ऐसे जनोपयोगी आध्यात्मिक ग्रन्थों का चिरन्तन महत्त्व स्वतः सिद्ध है।

'योगामृत' के प्रणेता मुनि बालचन्द्र हैं और इसकी उपलब्ध श्लोक संख्या ९९ है। मुनि बालचन्द्र का विस्तृत परिचय अज्ञात है। ग्रन्थ की जो प्रति प्राप्त हुई है वह भी कदाचित् अपूर्ण है अथवा यह भी हो सकता है कि किन्हीं अज्ञात कारणों से लेखक इसे पूर्ण ही न कर पाया हो। जो भी हो, अपने वर्तमान रूप में, ग्रन्थ अपूर्ण है और इसमें लेखक का परिचय अप्राप्त है।

जैन मुनियों, जैनाचार्यों और जैन-लेखकों ने भारत की विभिन्न जनपदीय भाषाओं में साहित्य-सृष्टि कर अपने विचारों को आम जनता तक पहुंचाने का एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। 'योगामृत' भी इसका अपवाद नहीं है। यह कानड़ी ग्रन्थ है और मूलतः मुनि बालचन्द्र ने इसकी रचना कनड़ी भाषा में की है, किन्तु हिन्दी-भाषी जनता तक इस ग्रन्थ को पहुंचाने की बलवती इच्छा के फलस्वरूप विवेच्य ग्रन्थ की हिन्दी टीका आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज ने की है और इसका सम्पादन श्री बलभद्र जैन ने किया है। ग्रन्थ के टीकाकार आचार्य-रत्न श्री देशभूषण जी महाराज ने अब तक लगभग ७० ग्रन्थों का मौलिक प्रणयन किया है अथवा विभिन्न भाषाओं के और विविध विषयों के ग्रन्थों का अनुवाद किया है। वे संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, कनड़ी, तामिल, मराठी, हिन्दी आदि अनेक भाषाओं के समर्थ विद्वान् हैं।' विषय के ऐसे अधिकारी विद्वान् द्वारा 'योगामृत' जैसे आध्यात्मिक ग्रन्थ की टीका अनुवाद व्याख्या आदि का यदि जन-सामान्य में स्वागत हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

जैसाकि कहा जा चुका है 'योगामृत' का प्रतिपाद्य सूक्ष्म तत्त्व चिन्तन है। इसमें स्पष्टतः यह बताया गया है कि आत्म-परिज्ञान के बिना मुक्ति सम्भव नहीं। मात्र शास्त्रों के पठन-पाठन से ही अज्ञानी को आत्मानुभव नहीं हो सकता। आत्मानुभव के लिए सम्यग्दृष्टि की आवश्यकता है और सम्यग्दृष्टि को बाह्य पदार्थों की चिन्ता नहीं रहती, वरन् सदा आत्मा की ही चिन्ता रहती है क्योंकि आत्मा का सुख आत्मा में ही निहित है, परवस्तु में नहीं।

टीकाकार ने सर्वप्रथम 'योगामृत' के मूल श्लोकों का सरल हिन्दी में 'अर्थ' किया है, तदुपरान्त 'विवेचन' के अन्तर्गत विस्तृत व्याख्या करते हुए संस्कृत, प्राकृत आदि के श्लोकों से मन्तव्य और अधिक पुष्ट और स्पष्ट किया है। कहीं-कहीं 'भावार्थ' भी दे दिया है और कहीं 'सारांश यह है' आदि से सार रूप में मन्तव्य को प्रस्तुत कर दिया है। यथा—'कहने का सारांश यह है कि हे भव्य जीव ! तू इस संसार, विषयवासना का मन, वचन, काय से त्याग करके शुद्ध, अखण्ड, अविनाशी ज्योति जो शरीर में निरन्तर प्रकाशमान हो रही है उसके दर्शन कर।' (योगामृत, पृ० २४९)। योग जैसे दुरूह विषय को सरस बनाने के लिए विवेचन अथवा भावार्थ के अन्तर्गत दृष्टान्तों या लोकप्रचलित कथाओं का आधार भी टीकाकार ने ग्रहण किया है। यथा—'योगामृत' के श्लोक क्रमांक ६१ के भावार्थ में जीव के परवस्तु के प्रति मोह का स्पष्टी-करण करते हुए टीकाकार लिखते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"लोक में एक कथा प्रसिद्ध है।

किसी जंगल में कोई एक साधु आत्म-साधन में लगे हुए आसन लगाकर स्थिर बैठे थे। अर्थात् ध्यान में लीन थे। एक समय उनके पास एक चूहे ने आकर नमस्कार किया। उसका नमस्कार करने का कारण यह था कि उसको पूर्व जन्म के संस्कार अर्थात् वह पूर्व जन्म में धन के आर्तध्यान से मरकर चूहा बना था। उस साधु को देखकर उसके संस्कार जागृत हुए, इससे उसने महात्मा के पास आकर आनन्द से मस्तक झुका कर नमस्कार किया। इससे वह साधु उस चूहे पर प्रसन्न हुआ और बोला—हे चूहे! तेरे नमस्कार से मुझे अत्यंत प्रसन्नता हुई है, मैं तुझे मनुष्य पर्याय में या देव पर्याय में जन्म लेने का उपाय बताऊं या सेठ साहूकार होने का उपाय बताऊं या बना दूं या सूर्य, चन्द्र, भुवनपति या देव आदि बना दूं। अगर तुझे मनुष्य बना दूं तो धर्म की आराधना का महासाधन प्राप्त होता है। उस साधु का वचन सुनकर चूहा कहने लगा कि हे महात्मा! मुझे श्रीमंत बनने की इच्छा नहीं है। परन्तु एक अत्यन्त सुन्दर रूपवती चुहिया मिले ऐसा मुझे आशीर्वाद दें।...तब महात्मा समझ गया कि अज्ञानी, मोही, बहिरात्मा जीव का यही स्वभाव होता है, इसलिए अपनी वासना के अनुसार ही ये आशीर्वाद मांगते हैं।" (योगामृत, पृ० २४१)

कहने की आवश्यकता नहीं कि 'योगामृत' के टीकाकार श्री देशभूषण जी महाराज की शैली सरल, सुबोध, रोचक एवं सरल है। आशा है, धर्मप्राण जनता में इसका अच्छा स्वागत होगा और जनसमुदाय इससे लाभ उठाकर आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org